जैन साहित्य के व्यास—कलिकाल सर्वज्ञ आचार्य हेमचन्द्र के व्यक्तित्व एवं कृतित्व की एक विरल झांकी यहाँ प्रस्तुत है।

☐ **अभयकुमार जैन,** एम० ए०, बी० एड०
साहित्यरत्न (बीना, म० प्र०)

आचार्य हेमचंद्र : जीवन, व्यक्तित्व एवं कृतित्व

☐

भारतीय वाङ्मय के विकास में जिन आचार्यों ने महान् योगदान दिया है उनमें 'कलिकाल सर्वज्ञ' की उपाधि से विभूषित आचार्य हेमचन्द्र का स्थान अन्यतम है। वे 'ज्ञान के सागर' थे। उनका व्यक्तित्व व्यापक, विशाल, प्रेरक व गौरवपूर्ण था। कलिकाल सर्वज्ञ की उपाधि ही उनके व्यक्तित्व की विशालता एवं व्यापकता की द्योतक है। वे अद्भुत प्रतिभा के धनी थे। उनकी सर्वतोमुखी प्रतिभा किसी विषय विशेष तक ही सीमित नहीं थी; अपितु उन्होंने विभिन्न विषयों पर महान् ग्रन्थों का प्रणयन कर वाङ्मय के प्रत्येक क्षेत्र को अपनी लेखिनी से विभूषित और समृद्ध किया। वे एक मूर्तिमान ज्ञानकोष थे। **'इनमें एक साथ ही वैयाकरण, आलङ्कारिक, दार्शनिक, साहित्यकार, इतिहासकार पुराणकार, कोषकार, छन्दोनुशासक, धर्मोपदेशक और महान् युगकवि का अन्यतम समन्वय हुआ है।'**[1] केवल साहित्यिक क्षेत्र में ही नहीं, अपितु सामाजिक, सांस्कृतिक, धार्मिक एवं राजनैतिक क्षेत्रों में भी आचार्य श्री ने अपूर्व योगदान दिया है। वे सर्वजनहिताय, सर्वजनसुखाय तथा सर्वोपदेशाय इस भूतल पर अवतरित हुए थे। निःसन्देह भारत के मनीषियों और ऋषियों की परम्परा में उनका नाम स्वर्णाक्षरों में लिखा जाने योग्य है।

आचार्य श्री का जन्म गुजरात प्रदेश के अहमदाबाद नगर से लगभग ९६ किलोमीटर दूर दक्षिण-पश्चिम में स्थित 'धुँधुकानगर' या 'धंधुक्य' में वि०सं० ११४५ की कार्तिक-पूर्णिमा की रात्रि की मंगलबेला में हुआ था। प्राचीनकाल में यह एक समृद्धि सम्पन्न और सुविख्यात नगर था। संस्कृत के इतर ग्रन्थों में इस नगर के नाम 'धुन्धुकपुर' अथवा 'धुंधुक्क' नगर भी मिलते हैं।[2] इनके पिता का नाम 'चच्च' अथवा 'चाचिग' तथा माता का नाम 'चाहिणी' अथवा 'पाहिणी' था। ये मोढ़वंशीय[3] वैश्य थे। चूँकि इनके पूर्वजों का निष्क्रमण ग्राम 'मोढ़ेरा' से हुआ था इसी से ये मोढ़वंशीय कहे जाते थे। कहा जाता है कि इनके पिता शैवधर्मावलम्बी थे तथा माता जैनधर्मावलम्बी[4] थीं। धार्मिक सहिष्णुता और प्रेम का यह एक अच्छा उदाहरण था। पाहिणी का भाई (चङ्गदेव का मामा) नेमिनाग था जो पूर्णतः जैनधर्मावलम्बी था और जिसने अन्त में जैनीदीक्षा[5] भी ग्रहण की थी। प्रारम्भिक अवस्था में बालक का नाम **'चङ्गदेव'** रखा गया था। बालक का यह नामकरण इनकी कुलदेवी 'चामुण्डा' और कुलयक्ष **'गोनस'** के आद्यक्षरों के मेल से उनकी स्मृति स्वरूप किया गया था।[6] **सोमप्रभसूरि** के वर्णन के अनुसार जिस समय चङ्गदेव अपनी माता के गर्भ में थे उस समय उनकी माता ने अद्भुत स्वप्न देखे थे। **'प्रभावक चरित'** में भी माता द्वारा अद्भुत स्वप्न देखे जाने का वर्णन है तथा राजशेखर ने भी 'प्रबन्ध कोश' में माता के इस स्वप्न के विषय में लिखा है।

जन्मोपरान्त बालक चङ्गदेव का क्रमिक विकास शीघ्र सम्पन्न हुआ। 'होनहार बिरवान के होत चीकने पात' की लोकोक्ति के अनुसार बालक चङ्गदेव अपनी प्रारम्भिक अवस्था से ही अत्यधिक होनहार व निपुण था। माता-पिता और धर्मगुरुओं के सम्पर्क से बालक में सद्गुणों का विकास होना प्रारम्भ हुआ। जब ये केवल आठ वर्ष के ही थे तभी (वि०सं० ११५४ में) इन्होंने अपने समय के प्रसिद्ध आचार्य देवचन्द्र से साधुदीक्षा ग्रहण कर ली थी। ये ही इनके दीक्षागुरु, शिक्षागुरु और विद्यागुरु थे। आ० हेमचन्द्र ने भी अपने इन गुरु के नाम का स्पष्ट उल्लेख अपने 'त्रिषष्ठिशला का पुरुष चरित' में किया है।[7] दीक्षोपरान्त चङ्गदेव का नाम 'सोमचन्द्र' रखा गया था।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

चङ्गदेव की साधुदीक्षा के सम्बन्ध में प्रबन्धकोश, प्रभावकचरित तथा प्रबन्धचिन्तामणि में कुछ प्रसङ्ग उपलब्ध होते हैं। **प्रबन्धकोश (हेमसूरिप्रबन्ध**[९]**)** में राजशेखर ने लिखा है कि चङ्गदेव के मामा नेमिनाग ने आ०देवचन्द्र से धर्मसभा में चङ्गदेव का परिचय कराया। तत्पश्चात् नेमिनाग ने घर जाकर बहिन पाहिणी देवी से चङ्गदेव को साधु-दीक्षा दिलाने की प्रार्थना की। **प्रभावक चरित**[१०] के वर्णन के अनुसार माता जब अपने पुत्र के साथ देवमन्दिर गयी तो बालक चङ्गदेव आ० देवचन्द्र की गद्दी पर जा बैठा और आचार्यश्री ने पाहिणी को स्वप्न की याद दिलाकर पुत्र को शिष्य के रूप में माँग लिया। **प्रबन्ध चिन्तामणि** के अनुसार एक समय आचार्य देवचन्द्र 'अणहिलपत्तन' नगर से प्रस्थान कर तीर्थयात्रा के प्रसङ्ग में धुन्धुका पहुँचे और वहाँ मोढ़वंशियों की वसही (जैन मन्दिर) में देवदर्शन के लिए पधारे। उस समय शिशु चङ्गदेव खेलते-खेलते अपने साथियों के साथ वहाँ आ गया और अपने बालचापल्यस्वभाव से देवचन्द्राचार्य की गद्दी पर बड़ी कुशलता से जा बैठा। उसके शुभलक्षणों को देखकर आचार्य कहने लगे—**'यदि यह बालक क्षत्रिय कुलोत्पन्न है, तो सार्वभौम राजा बनेगा, और यदि यह वैश्य अथवा विप्रकुलोत्पन्न है तो महामात्य बनेगा और यदि कहीं इसने दीक्षा ग्रहण कर ली तो यह युग-प्रधान के समान अवश्य ही इस युग में कृतयुग की स्थापना करेगा।''**

चङ्गदेव से इस प्रकार प्रभावित होकर आ० देवचन्द्र ने यह बालक (चङ्गदेव) उसकी मां तथा अन्य सम्बन्धियों से मांग लिया और साधुदीक्षा देकर इसकी शिक्षा का उत्तम प्रबन्ध स्तम्भतीर्थ में उदयन मंत्री के घर पर किया। अल्पकाल में ही इन्होंने तर्क, लक्षणा और साहित्य विद्याओं में अपना अधिकार प्राप्त कर अनन्य पाण्डित्य एवं प्रवीणता प्राप्त कर ली। समस्त वाङ्मयरूप जलराशि को अगस्त्यऋषि की भाँति आत्मसात् कर लिया। **तत्पश्चात् मुनि सोमचन्द्र ने अपने गुरु आचार्य देवचन्द्र के साथ स्थान-स्थान पर परिभ्रमण कर अपने शास्त्रीय एवं व्यावहारिक ज्ञान में काफी वृद्धि की**[११] और २१ वर्ष की अल्प आयु में ही मुनि सोमचन्द्र सभी शास्त्रों में तथा व्यावहारिक ज्ञान में परिपूर्ण हो गये। इसी समय वि०सं० ११६६ में इनके गुरु ने ३६ आचार्यों से विभूषित आचार्य पद पर प्रतिष्ठित करके इन्हें 'हेमचन्द्र' नाम दिया जिससे ये आचार्य हेमचन्द्र कहलाये। ऐसा भी कहा जाता है कि मुनि सोमचन्द्र चन्द्रमा के समान सुन्दर थे और इनका शरीर सोने के समान तेजस्वी था तथा इनमें कुछ असाधारण शक्तियाँ भी विद्यमान थीं अतः इन्हीं सब कारणों से सोमचन्द्र को हेमचन्द्र कहा जाने लगा था। अस्तु, आचार्यपद-भूषित हेमचन्द्र का पाण्डित्य, सर्वाङ्गमुखी प्रतिभा, प्रभाव एवं व्यक्तित्व बड़ा ही आकर्षक एवं प्रभाव युक्त था। अतः इन्होंने अपने प्रभावी व्यक्तित्व एवं ओजस्वी तथा आकर्षक वाणी द्वारा समाज को अपनी ओर आकृष्ट किया और काफी लम्बे समय तक साहित्य एवं समाज की सेवा की।

अगाध पाण्डित्य, अद्भुत प्रतिभा और गहन अध्ययन के फलस्वरूप इन्होंने व्याकरण, कोश, अलङ्कारशास्त्र, छन्दशास्त्र, काव्य, दर्शन, योगशास्त्र, पुराण, इतिहास तथा स्तोत्र आदि विविध विषयों पर अपनी लेखिनी चलायी और प्रत्येक विषय पर बड़ी ही योग्यता पूर्वक लिखा। 'साहित्य की विपुलता एवं विस्तार की दृष्टि से आचार्य हेमचन्द्र को यदि 'साहित्य सम्राट्' भी कहा जाय तो अत्युक्ति नहीं होगी।'[१२] इनके विद्वत्तापूर्णग्रन्थों ने डा० पिटर्सन महोदय को भी आश्चर्य में डाल दिया। **डा० पिटर्सन महोदय ने** इनको 'ज्ञान महोदधि' (Ocean of knowledge) के विशेषण से अलंकृत किया है। सोमप्रभसूरि ने भी शतार्थकाव्य की टीका में लिखा है—**'जिन्होंने नया व्याकरण, नया छन्द शास्त्र, नया द्वयाश्रय, नया अलङ्कार, नया तर्कशास्त्र और नये जीवन-चरित्रों की रचना की हैं, उन्होंने (हेमचन्द्रसूरि ने) किस-किस प्रकार से मोह दूर नहीं किया है ?'**[१३]

आ० हेमचन्द्र ने जिस विपुल साहित्य का प्रणयन किया वह समग्ररूप में तो प्राप्त नहीं होता तथापि विद्वानों का अनुमान है कि इन्होंने शताधिक ग्रन्थों का सृजन किया था। **श्रद्धेय मुनिश्री पुण्यविजयजी ने** हेमचन्द्र सूरि द्वारा प्रणीत २५ कृतियों के नाम गिनाये हैं उनमें सिद्धहेमशब्दानुशासन, अभिधानचिन्तामणि, अनेकार्थसंग्रह, निघण्टुकोष, देशीनाममाला, सिद्धहेमलिंगानुशासन, धातुपारायण, योगशास्त्र, द्वयाश्रयकाव्य, काव्यानुशासन, छन्दोऽनुशासन तथा त्रिषष्ठिशालाका पुरुष चरित आदि महत्वपूर्ण रचनाएँ हैं। इन्होंने कुछ द्वात्रिंशिकाएँ तथा स्तोत्र भी लिखे हैं। श्रद्धेय डा० आनन्दशंकर ध्रुव के अनुसार **'द्वात्रिंशिकाएँ तथा स्तोत्र, साहित्यिक दृष्टि से हेमचन्द्राचार्य की उत्तम कृतियां हैं। उत्कृष्ट बुद्धि तथा हृदय की भक्ति का उनमें सुभग संयोग है।'** संस्कृत, प्राकृत तथा अपभ्रंश इन तीनों भाषाओं पर

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

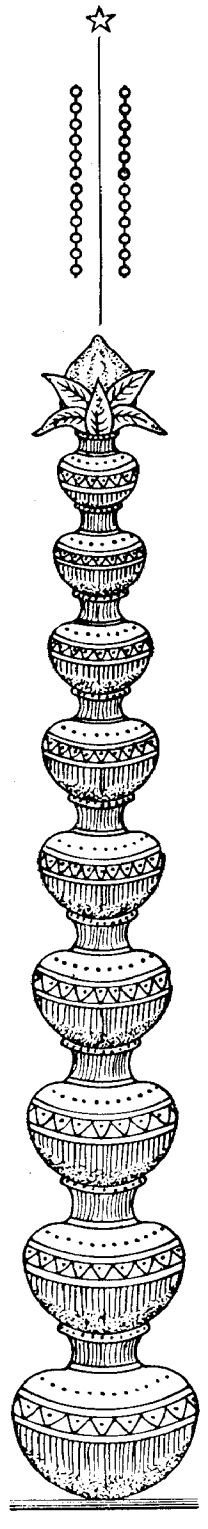

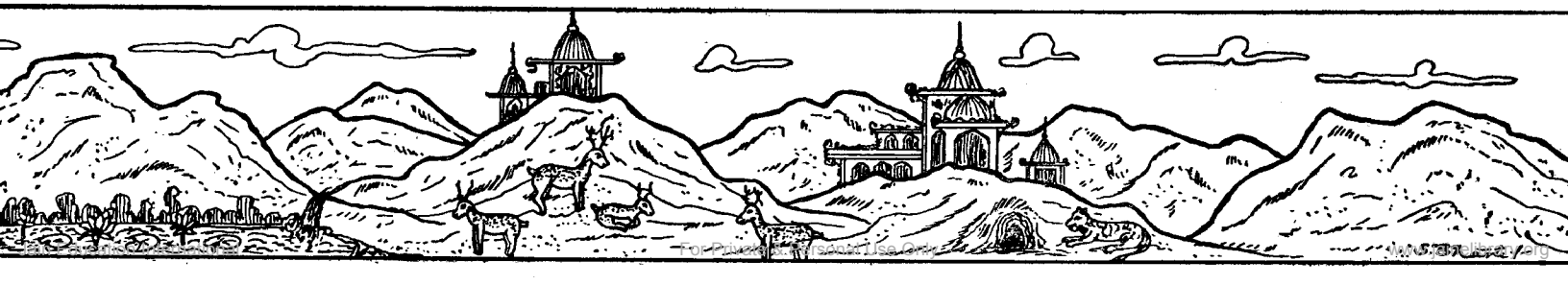

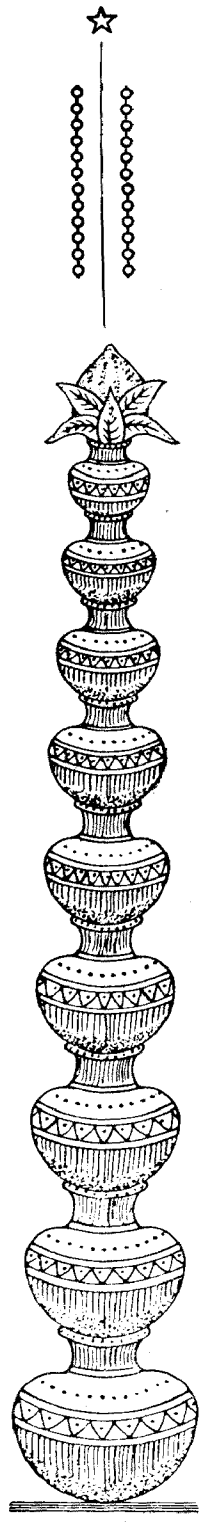

इसका समान अधिकार था। इनका 'शब्दानुशासन' संस्कृत, प्राकृत अथा अपभ्रंश भाषाओं के व्याकरण का ज्ञान कराने में अत्यधिक उपयोगी है। अपभ्रंश भाषा के लिए उनका महत्त्वपूर्ण योगदान है। शब्दानुशासन में अपभ्रंश भाषा का भी व्याकरण लिखकर आचार्यश्री ने एक बड़ा ही ऐतिहासिक कार्य सम्पन्न किया है तथा अपभ्रंश भाषा को संरक्षण प्रदान किया है। बाद के विद्वानों द्वारा अपभ्रंश की जो खोज हो सकी है, उसका मुख्य श्रेय आ० हेमचन्द्र को ही है। लघु होते हुए भी इनका अपभ्रंश व्याकरण सर्वांगपरिपूर्ण, सरल व स्पष्ट है। **पं० चन्द्रधर शर्मा गुलेरी ने** हेमचन्द्र के तीन महत्त्वों की ओर हमारा ध्यान आकर्षित किया है—

'हेमचन्द्र ने पीछे न देखा तो आगे देखा, उधर का छूटा तो इधर बढ़ा लिया। अपने समय तक की भाषा का विवेचन कर डाला। **यही हेमचन्द्र का पहला महत्त्व है** कि और वैयाकरणों की तरह केवल पाणिनि के लोकोपयोगी अंश को अपने ढचर में बदलकर ही वह संतुष्ट न रहा, पाणिनि के समान पीछा नहीं तो आगा देखकर अपने समय तक की भाषा का व्याकरण बन गया।'

'अपभ्रंश के अंश में उसने पूरी गाथाएँ, पूरे छन्द और पूरे अवतरण दिये। **यह हेमचन्द्र का दूसरा महत्त्व** है।—अपभ्रंश के नियम यों समझ में नहीं आते। मध्यम पुरुष के लिए 'पइं' शपथ में 'थ' की जगह 'ध' होने से 'सवध' और मक्कड़घुग्घि का अनुकरण प्रयोग बिना पूरा उदाहरण दिये समझ में नहीं आता।'

तीसरा महत्त्व हेमचन्द्र का यह है कि वह अपने व्याकरण का 'पाणिनि' और 'भट्टोजिदीक्षित' होने के साथ-साथ उसका 'भट्टि' भी है। उसने अपने संस्कृत-प्राकृत द्वयाश्रय काव्य में अपनी व्याकरण के उदाहरण भी दिए हैं तथा सिद्धराज जयसिंह और कुमारपाल का इतिहास भी लिखा है। भट्टि और भट्टभौमिक की तरह वह अपने सूत्रों के क्रम से चलता है।'

आ० हेमचन्द्र के व्यक्तित्व और कृतित्व से आकृष्ट होकर गुजरात के राजा सिद्धराज जयसिंह ने इनको पर्याप्त सम्मान दिया। सिद्धराज से ही प्रेरणा पाकर इन्होंने 'सिद्धहेमशब्दानुशासन' की रचना की थी। वि० सं० ११९९ में सिद्धराज की मृत्यु होने के पश्चात् कुमारपाल सिंहासनारूढ़ हुआ। हेमचन्द्र से प्रभावित होकर उसने अपने राज्य में जीवहत्या बन्द करा दी थी तथा कुछ समय पश्चात् जैनधर्म धारण कर जुआ और मद्यपान को भी प्रतिबन्धित कर दिया था। उसने अपने राज्य को सदैव दुर्व्यसनों से मुक्त रखने का प्रयत्न किया और अनेक जैनमन्दिरों तालाबों धर्मशालाओं और विहारों का भी निर्माण कराया। इस प्रकार वह बहुत समय तक भली-भाँति प्रजा का पालन करता रहा। कुमारपाल की मृत्यु सन् ११७४ (वि० सं० १२३१) में हुई। कुमारपाल की मृत्यु से छह माह पहले हेमचन्द्र का स्वर्गवास हो गया था।

ऐसा माना जाता है कि अन्तिम समय में आ० हेमचन्द्र ने 'प्रमाण-मीमांसा' की रचना की थी। यह उनकी अपूर्ण रचना है। पाँच अध्यायों में इसकी रचना किये जाने का यद्यपि उल्लेख मिलता है; परन्तु वर्तमान में प्रथम अध्याय पूर्ण (प्रथम तथा द्वितीय आह्निक) तथा द्वितीय अध्याय अपूर्ण (प्रथम आह्निक मात्र) ही मिलता है। शेष ग्रन्थ को आचार्यश्री या तो वृद्धावस्था के कारण पूर्ण नहीं कर सके हैं अथवा पूर्ण कर भी लिया है तो फिर यह काल-कवलित हो जाने से आज उपलब्ध नहीं हैं। सूत्रशैली में ग्रथित और स्वोपज्ञवृत्ति सहित इस लघुग्रन्थ में प्रमाण और प्रमेय की साङ्गोपाङ्ग जानकारी दी गयी है। प्रमाण, प्रमाता, प्रमेय आदि तत्त्वों का इसमें सुन्दर निरूपण है। अपने पूर्ववर्ती आचार्यों से इन्होंने बहुत कुछ ग्रहण किया तथा बहुत-सी मौलिक उद्भावनाएँ भी की हैं। जैनदर्शन तथा अन्यदर्शन सम्बन्धी कृतियों के परिप्रेक्ष्य में प्रमाण-मीमांसा का अध्ययन करने पर यह बात सहज ही स्पष्ट हो जाती है। **श्रद्धेय पं० सुखलाल जी संघवी** ने इस दृष्टि से प्रमाणमीमांसा पर एक विस्तृत टिप्पण लिखा है, जिसकी विद्वानों ने मुक्तकण्ठ से प्रशंसा की है।

आ० हेमचन्द्र की अगाध विद्वत्ता का दाय उनके शिष्यों को मिला और उन्होंने साहित्य की श्रीवृद्धि करने में चार-चाँद लगा दिए। उनके शिष्यों में रामचन्द्रसूरि की प्रसिद्धि सम्पूर्ण देश में फैली हुई थी और उस समय के विद्वानों में हेमचन्द्र के बाद इन्हीं का नाम लिया जाता था। इसके अतिरिक्त गुणचन्द्र, महेन्द्रसूरि, वर्धमानगणि, देवचन्द्र, उदयचन्द्र, यशश्चन्द्र, बालचन्द्र आदि दूसरे शिष्य थे। इन सबका साहित्यिक क्षेत्र में महान योगदान है।

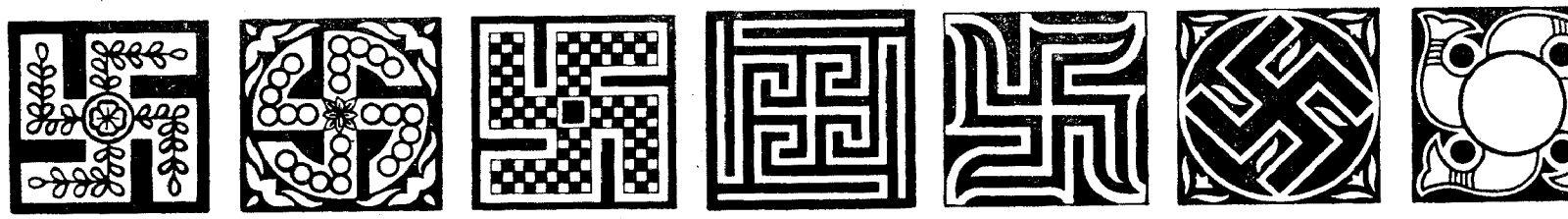

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मनीषियों की दृष्टि में आचार्य हेमचन्द्र

१—'Creator of Gujarat consciousness'—'गुजरात का चेतनदाता→ By के. एम. मुन्शी.
२—'Intellectual gaint'—'बौद्धिक राक्षस'—By प्रो० पारीख.
३—'गुजरात के ज्योतिर्धर'—By गुजरात के साहित्यिक मनीषी
४—'Ocean of knowledge'—'ज्ञान के महोदधि—डा० पिटर्सन
५—'विद्याम्भोनिधि :'—By. सोमप्रभसूरि—(शतार्थकाव्य)

---

१ डा० वि०भा० मुसलगांवकर—'आचार्य हेमचन्द्र', पृ० १६९
२ प्रबन्धकोश—धुन्धकपुर । प्रबन्ध चिन्तामणि—'धुन्धुक्क' । पुरा०प्र०सं०—'धुन्धुक्क' ।
३ प्रबन्धचिन्तामणि—मोढ़वंश । प्रबन्धकोश—मोढ़ज्ञातीय । पुरा०प्र०सं०—मोढ़कुल ।
४ प्रबन्धकोश—(हेमसूरि प्रबन्ध)
५ प्रबन्धचिन्तामणि, पृ० ८३
६ (क) प्रबन्धचिन्तामणि (हेमप्रभसूरिचरित), पृ० ८३ ।
(ख) कुमारपाल प्रतिबोध, पृ० ४७८
७ प्रबन्धकोश, प्रबन्धचिन्तामणि, कुमारपाल प्रतिबोध तथा पुरातन प्रबन्ध संग्रह में इनकी साधुदीक्षा के समय की आयु आठ वर्ष ही बतलायी गयी है ।
८ त्रिषष्ठि श० पु० चरित—प्रशस्ति, श्लोक १४ ।
९ प्रबन्धकोश (हेमसूरि प्रबन्ध)
१० प्रभावक चरित, पृ० ३४७, श्लोक ८४८ ।
११ काव्यानुशासन की अंग्रेजी प्रस्तावना—प्रो० पारीख ।
१२ डा० वि०भा० मुसलगांवकर—'आचार्य हेमचन्द्र'
१३ (क) 'कलृप्तं व्याकरणं नवं विरचितं छन्दो नवं द्व्याश्रया—
लंकारौ प्रथितौ नवौ प्रकटितं श्रीयोगशास्त्रं नवम् ।
तर्क : संजनितं नवो जिनवरादीनां चरित्रं नवं,
बद्धं येन न केन केन विधिना मोहः कृतो दूरतः ॥ —शतार्थकाव्य
(ख) 'विद्याम्भोनिधिः मंथमंदरगिरिः श्री हेमचन्द्रो गुरुः' —शतार्थकाव्य
१४ अन्ययोग व्यवच्छेद की स्याद्वाद मञ्जरी टीका—सम्पादित—आ० शं० ध्रुव
१५ पुरानी हिन्दी, पृ० १२९

☆☆